विषय	हिंदी
प्रश्नपत्र सं. एवं शीर्षक	**P5: भाषाविज्ञान**
इकाई सं. एवं शीर्षक	**M35: प्रोक्ति एवं पाठ**
इकाई टैग	**HND_P5_M35**

निर्माता समूह	
प्रमुख अन्वेषक	**प्रो. गिरीश्वर मिश्र** कुलपति, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र) 442001 ईमेल : misragirishwar@gmail.com
प्रश्नपत्र समन्वयक	**डॉ. उमाशंकर उपाध्याय** पूर्व प्रोफेसर, भाषा विद्यापीठ महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र) 442001 ईमेल : usupadhyay@gmail.com
इकाई-लेखक	**प्रो. रामबख्श मिश्र** पूर्व प्रोफेसर, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी (उ.प्र.) ईमेल : misrarambaksh@gmail.com
इकाई समीक्षक	**डॉ. उमाशंकर उपाध्याय** पूर्व प्रोफेसर, भाषा विद्यापीठ महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र) 442001 ईमेल : usupadhyay@gmail.com
भाषा संपादक	**डॉ. उमाशंकर उपाध्याय** पूर्व प्रोफेसर, भाषा विद्यापीठ महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र) 442001 ईमेल : usupadhyay@gmail.com

पाठ का प्रारूप

1. पाठ का उद्देश्य
2. प्रस्तावना
3. प्रोक्ति का स्वरूप
4. प्रोक्ति के प्रकार
5. महावाक्य की संकल्पना
6. पाठ और पाठ का विश्लेषण
7. भारतीय परंपरा में पाठ की अवधारणा
8. निष्कर्ष

1. पाठ का उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप-

- प्रोक्ति (Discourse) और पाठ (Text) के विश्लेषण की संकल्पना और उसके विविध आयामों को जान सकेंगे,
- प्रोक्ति क्या है और उसके कितने प्रकार हैं - यह आप समझ सकेंगे,
- आप 'पाठ' की संकल्पना जान सकेंगे और प्रोक्ति के साथ उसकी समानता और अंतर को जान सकेंगे तथा
- प्रोक्ति और पाठ के व्यावहारिक जीवन से जुड़े विभिन्न सरोकारों को समझ सकेंगे।

2. प्रस्तावना

सभी वैयाकरण प्रायः इस बात से सहमत रहे हैं कि वाक्य ही भाषा की आधारभूत इकाई होती है। वाक्य से मंतव्य पूरा हो जाता है। अपने आप में पूर्ण और स्वतंत्र होने की वजह से वाक्य भाषिक विश्लेषण का मूलभूत आधार बन जाता है। तथापि विचारों के आदान-प्रदान के लिए केवल वाक्य पर्याप्त नहीं होते । पूर्ण संप्रेषण के लिए वाक्य की सीमा को पार करना पड़ता है । प्रकरण और सन्दर्भ सहित संप्रेषण करने के लिए सुसंबद्ध वाक्यों का उपयोग करना पड़ता है। इस इकाई में हम संप्रेषण के लिए महत्वपूर्ण दो तत्वों प्रोक्ति और पाठ के बारे में पढ़ेंगे।

3. प्रोक्ति क्या है ?

प्रोक्ति भाषा की वह इकाई है, जो वाक्य से बड़ी होती है तथा जिसके कथ्य में आंतरिक संयोजन तथा वाक्यों में संदर्भपरक और तर्कपूर्ण अनुक्रम रहता है। इस प्रकार रूपात्मक संसक्ति तथा अर्थ-संगति प्रोक्ति की मुख्य विशेषताएँ हैं।

प्रोक्ति वक्ता के मंतव्य का प्रतिनिधित्व करती है और उसे संदर्भ और प्रकरण से जोड़ती है। प्रोक्ति एक अल्पांग वाक्य भी हो सकती है (जैसे - हाँ/बैठिए), एक पूर्णांग वाक्य भी हो सकती है (जैसे - सभी लोग आ गए हैं)। वह एक से अधिक वाक्यों का समूह भी हो सकती है (जैसे - जो किताबें आपको पसंद हों, ले जाइए। बाकी आलमारी में रख दीजिए)। स्मरण रहे कि अर्थ के स्तर पर अनुवाद की सबसे छोटी इकाई प्रोक्ति ही होती है, मात्र वाक्य नहीं।

भाषा एक बहुस्तरीय संरचना है और इसका हर स्तर एक दूसरे से अधिक्रमित संबंधों के आधार पर जुड़ा है। यह स्वनिम से आरम्भ होकर प्रोक्ति के स्तर तक पहुंचती है।

प्रोक्ति
वाक्य
उपवाक्य
पदबंध
शब्द
रूपिम
स्वनिम

प्रोक्ति : संप्रेषण के स्तर पर भाषा की मूल इकाई
वाक्य : व्याकरणिक संरचना के स्तर पर भाषा की सबसे बड़ी इकाई

रूपिम : भाषा की लघुतम अर्थवान इकाई

स्वनिम : भाषा की लघुतम संरचनात्मक (वाग्ध्वनि) इकाई

'प्रोक्ति एवं पाठ' के स्वरूप को लेकर भाषाविदों में कई मत रहे हैं। संबद्ध एवं तर्कसंगत रूप से अन्वित वाक्यों को पाठ के अंतर्गत माना गया है और उनके अध्ययन को 'पाठ विश्लेषण' कहा गया है। दूसरी ओर सामाजिक अर्थों, कार्यव्यापारों और वाक्यों के बीच के संबंधों को 'प्रोक्ति' कहा गया है। इसके अध्ययन को 'प्रोक्ति विश्लेषण' कहा गया है। वस्तुतः 'प्रोक्ति एवं पाठ' इन दोनों में कोई विशेष अंतर नहीं है। जीवन में वास्तविक प्रयोग के संदर्भ में भाषा अपने आप में सुनियोजित ताने-बाने जैसी बुनी होती है और उससे होने वाला संप्रेषण व्याकरणिक तथा कोशगत अर्थ से ऊपर के स्तर का होता है। अतः यह कहा जा सकता है कि यदि व्याकरणिक संरचना की दृष्टि से वाक्य भाषा की महत्तम इकाई है तो संप्रेषणीयता की दृष्टि से प्रोक्ति भाषा की महत्तम इकाई है।

अस्तु यह मानना ठीक होगा कि प्रोक्ति एक वाक्योपरि इकाई है। यहाँ 'वाक्योपरि' का तात्पर्य वाक्यों की एक व्यवस्थित कड़ी से है। जैसे वाक्य शब्दों की कड़ी है वैसे ही प्रोक्ति वाक्यों की कड़ी है किंतु शब्दों की हर कड़ी वाक्य नहीं होती वैसे ही वाक्यों की हर कड़ी प्रोक्ति नहीं हो सकती। प्रोक्ति के अंतर्गत वाक्यों में परस्पर रूपात्मक संसक्तता का होना आवश्यक है। अर्थात् वाक्यों का अनुक्रम विषय के अनुरूप होता है। इस तार्किक संसक्ति तथा अर्थ संगति के कारण प्रोक्ति भाषिक व्यवहार की स्वायत्त व स्वतंत्र इकाई मानी जाती है।

भाषा एक प्रकार की सामाजिक संस्था है। हमारे सामाजिक व्यवहार भाषा के ही माध्यम से संपन्न होते हैं, जिसमें वक्ता और श्रोता के बीच संवाद या वार्तालाप होता है यह अनेक प्रकार का हो सकता है जैसे- दो व्यक्तियों का परस्पर संभाषण, अथवा एक व्यक्ति बोले और बहुत लोग सुनें जैसे कक्षा में अध्यापक और छात्रगण, अथवा किसी संत का आध्यात्मिक प्रवचन और सामने बैठे हजारों श्रोतागण अथवा चुनावी सभा में प्रत्याशी का भाषण, या कई लोग मिलकर किसी एक व्यक्ति से पूछताछ कर रहे हों। भाषिक व्यवहार के घटित होने में कई बातें शामिल रहती हैं। जैसे- वक्ता और श्रोता के बीच स्थिति कैसी है। उनकी उम्र, व्यवसाय, जाति/वर्ग, धर्म, शिक्षा, स्थान, उद्देश्य आदि भी प्रोक्ति की प्रकृति को निर्धारित करते हैं। साथ ही पराभाषिक तत्व जैसे हावभाव, आंगिक संचालन, चाक्षुष संपर्क, वक्ता श्रोता के बीच की दूरी तथा विविध प्रकार के सुर और अनुतान भी प्रोक्ति को प्रभावित करते हैं।

जयशंकर प्रसाद की प्रसिद्ध कहानी ***'आकाशदीप'***, में जेल में बंद दो अपराधियों की वार्ता है जो संबोधन से शुरू होती है:-

"बंदी" !

'क्या है? सोने दो'।

"मुक्त होना चाहते हो"

'अभी नहीं- निद्रा खुलने पर, चुप रहो'

'फिर अवसर न मिलेगा'

'बड़ा शीत है, कहीं से एक कंबल डालकर शीत से मुक्त करता'

'आँधी आने की संभावना है, यही अवसर है, आज मेरे बंधन शिथिल हैं',

"तो क्या तुम बंदी हो?"

'हाँ, धीरे बोलो, इस नाव पर केवल दस नाविक और प्रहरी हैं',

'शस्त्र मिलेगा'?

'मिल जाएगा, . पोत से संबद्ध रज्जु काट सकोगे' ?

"हाँ" ।

इसमें संदर्भ, वाक्यों के तार्किक अनुक्रम तथा अर्थ-संगति से पता चलता है कि यह जेल (कारागार) है और उसमें अपराधी बंद हैं। जेल की कोठरी काल कोठरी सी लगती है। सुविधाओं का अभाव रहता है, जिंदगी उबाऊ होती रहती है, अतः लंबी अवधि की सजा काटने के बजाय बंदी लोग जेल से भाग जाना चाहते हैं।
संदर्भपरक तुलनीयता में स्थिति विशेष, परिवेश, उद्देश्य, प्रतिपादित विषयवस्तु आदि का विशेष महत्व होता है। इसमें इस बात पर ध्यान दिया जाता है की ***कौन, किससे, कहाँ, क्या और क्यों*** कह रहा है। इन उदाहरणों पर ध्यान दें :
(i) My father has gone to Bombay.
(ii) My servant has gone to Bombay.
इन वाक्यों का हिंदी रूपांतरण इस प्रकार होगा:-
(i) मेरे पिता जी मुंबई गए हैं।
(ii) मेरा नौकर मुंबई गया है।

संरचनात्मक स्तर पर पर अंग्रेजी के दोनों वाक्य समान हैं। किंतु हिंदी में कुछ भिन्नता मिलती है :- सर्वनाम **'मेरे'** और **'मेरा'** तथा क्रियापद **'गए हैं'** और **'गया है'** का यह अंतर संदर्भपरक है। हिंदी का पहला(i) वाक्य आदरसूचक है।

इसी प्रकार मृदुला कोहली (1994,167) ने रामकुमार वर्मा कृत 'चारुमित्र' से रजनी और नौकर मंगलू के बीच सम्पन्न हुए निम्नलिखित वार्तालाप को उद्धृत किया है–
रजनीः मंगलू
नौकरः जी सरकार।
रजनीः बाबूजी जाते हुए कुछ कह गए थे ?
नौकरः जी सरकार।
रजनीः अब दस बजते होंगे।
नौकरः जी सरकार।
रजनीः अच्छा अब तुम सो जाओ।
नौकरः जी सरकार।

इसमें नौकर मंगलू द्वारा मालकिन रजनी के प्रति अत्यधिक आदरभाव की अभिव्यक्ति हुई है, जी और सरकार शब्दों के प्रयोग से। अतः यह स्पष्ट होता है कि सामाजिक स्तरभेद से भाषिक व्यवहार में भी स्तरभेद होता है।
भाषिक संप्रेषण के दो प्रचलित माध्यम हैं: मौखिक तथा लिखित। दोनों ही प्रकार से भाषिक संप्रेषण की पूर्णता के लिए दो तत्वों का होना अपरिहार्य है–(1) भाषिक संप्रेषण के अंतर्गत भाषा-पक्ष को नियंत्रित करने के लिए एक नियम संहिता होती है जो हर भाषा की अलग-अलग होती है। इस नियम संहिता का ज्ञान वक्ता(लेखक) तथा श्रोता (पाठक) दोनों को होना चाहिए अन्यथा ठीक-ठीक संप्रेषण नहीं हो पाएगा, तथा (2) भाषिक संप्रेषण के संदर्भ का समुचित ज्ञान भी वक्ता(लेखक) तथा श्रोता (पाठक) दोनों को होना आवश्यक है ।

भाषा में शब्दों का अनेकार्थी और पर्यायवाची होना भाषा की सामान्य विशेषता है । शब्दकोशों में शब्द के कई अर्थ और नमूने के तौर पर उनके अलग-अलग प्रयोग दिए रहते हैं । जैसे 'अंक' शब्द का अर्थ 'संख्या'भी है और 'गोद' भी

है। यह शब्द 'प्राप्तांक' 'एकांकी नाटक' और किसी 'पत्रिका का विशेषांक' जैसे पदबंधों में भी प्रयुक्त हुआ है । शब्द के विशिष्ट प्रयोग में कोई सर्वथा नवीन अर्थ भी निकल आता है, संदर्भ मालूम हो तो आधे-अधूरे अपूर्ण उच्चारणों से भी सही-सही और पूरा अर्थबोध हो सकता है ।

दिल्ली में, एक बस अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान की ओर जाने वाली सड़क पर चल रही थी। एक यात्री बस में चढ़ा। कंडक्टर ने कहा -- ***'टिकट'***

उसको एक नोट देते हुए यात्री बोला -- ***'मेडिकल'***

"कंडक्टर ने उसे टिकट दिया और कुछ पैसे लौटाए। बस अखिल भारतीय आर्युविज्ञान संस्थान के पास रुकी तो वह यात्री उतर गया।"

इस उदाहरण में 'मेडिकल' इस एक शब्द का अर्थ सामान्य न होकर संदर्भपरक है।

प्रोक्ति के निर्धारण का आधार उसका आकार नहीं उसका प्रकार्य होता है। एक प्रोक्ति का आकार शब्द, वाक्य, अनुच्छेद, अध्याय से लेकर संपूर्ण कृति तक हो सकता है।

हिंदी का पदबंध 'पके आम और केले' के भी दो अर्थ हो सकते हैं':

(i) आम और केले दोनों पके हैं।

(ii) आम पके हैं और केले कच्चे हैं ।

हिंदी का वाक्य है : 'औरत ने रोते हुए बच्चे को उठा लिया'। इसके भी दो अर्थ हो सकते हैं:

(i) औरत रो रही थी (अर्थात बच्चा नहीं रो रहा था) ।

(ii) बच्चा रो रहा था (अर्थात औरत नहीं रो रही थी) ।

लेकिन कथन यदि इस प्रकार हो कि:

'औरत ने रोते हुए बच्चे को उठा लिया और बच्चा चुप हो गया' तो अर्थ सुनिश्चित हो जाएगा कि बच्चा रो रहा था।

वाक्य भी अनेकार्थी हो सकते हैं । नोआम चॉम्सकी का एक प्रसिद्ध वाक्य है :

Flying planes can be dangerous.

इसके दो अर्थ हैं :

(i) उड़ते हुए जहाज खतरनाक हो सकते हैं ।

(ii) जहाज़ों को उड़ाना खतरनाक हो सकता है ।

4. प्रोक्ति के प्रकार -

भाषिक व्यवहार में वाक्यों का जो संयोजन और अनुक्रम होता है उसे ही प्रोक्ति कहते हैं। प्रोक्ति के दो प्रमुख प्रकार हैं– वार्तालाप तथा एकालाप।

वार्तालाप -

वार्तालाप में एक से अधिक अर्थात् कई अथवा कम से कम दो प्रतिभागियों का होना आवश्यक है : 1) वक्ता तथा 2) श्रोता। वार्तालाप में वक्ता तथा श्रोता परस्पर भावों व विचारों का आदान-प्रदान करते हैं। आदान-प्रदान के इस क्रम में दोनों की भूमिकाएँ परस्पर बदलती भी रहती हैं। अर्थात् कभी वक्ता श्रोता बन जाता है तथा कभी श्रोता वक्ता बन जाता है। इस प्रकार दोनों के बीच उत्तर-प्रत्युत्तर की स्थिति बनी रहती है। निम्नलिखित उदाहरण पर ध्यान दें :

पति - 'जरा सुनती हो'।

पत्नी - 'क्या हुआ'?

पति - 'एक गिलास पानी ला दो, बड़ी प्यास लगी है'।
पत्नी - 'खुद ले लो, मैं रोटी बना रही हूँ'।
पति - 'बस आज दे दो। कल से मैं खुद ले लिया करूँगा'।
पत्नी - 'अच्छा, तो वो कल कब आएगा'?

इस वार्तालाप में दो प्रतिभागी हैं : पति और पत्नी। उनके बीच हो रहे उत्तर-प्रत्युत्तर के कारण उनके बीच वक्ता-श्रोता की भूमिकाओं की परस्पर अदला-बदली हो रही है।

एकालाप -

एकालाप में एक ही व्यक्ति वक्ता तथा श्रोता दोनों की भूमिकाओं का निर्वाह करता है। प्रकार्य की दृष्टि से एकालाप भी एक तरह का वार्तालाप ही होता है क्योंकि इसमें भी वक्ता और श्रोता तो होते हैं चाहे वह एक ही व्यक्ति क्यों न हो। जब कभी कोई व्यक्ति भावावेश में अपने आप से कुछ कहने लगता है तो वह स्वयं ही वक्ता भी होता है और स्वयं ही श्रोता भी होता है। उदाहरणार्थ– (राजेश स्वयं से)

'अरे, ये क्या 9 बज गए'।
'फिर से देर हो गई'।
'कितनी बार कहा है कि सुधर जा'।
'पर नहीं सुनता ना, अब भुगत'।
'आज तो तू पक्का काम से गया बेटा राजेश'.....

इस उदाहरण में परिस्थितिजन्य घबराहट के कारण व्यक्ति स्वयं से ही बात कर रहा है। अतः वही वक्ता भी है और श्रोता भी। इसी क्रम में शमशेर बहादुर सिंह की मछलियाँ कविता भी द्रष्टव्य है-

हमें लोग क्यों खाते हैं ?
क्योंकि
हम खुद
अपनी बिरादरी को खाती हैं।
यही परंपरा है।
यही परंपरा है।

इसमें खुद प्रश्न करना और खुद ही उत्तर देना इस कविता की विशेषता है।

नाटक का मंचन होता है : वे मंच पर खेले जाते हैं और संवाद प्रधान होते हैं । उनके पात्रों मे वाद-विवाद, संवाद, प्रश्न-उत्तर आदि होते हैं। उसमे एक आयाम यह भी होता है कि कोई पात्र कुछ कहता है तो मंच पर उसके बगल में मौजूद व्यक्ति को कुछ भी सुनाई नहीं पड़ता जबकि सभागार के श्रोता सुन रहे होते हैं। यदि किसी कहानी का नाट्यरूपांतरण होगा तो आख्यान के कथ्यांशों को संवाद की शैली में रूपांतरित करना होगा जिससे उनकी जीवंत प्रस्तुति संभव हो सके ।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि प्रोक्ति एक विशिष्ट परिस्थिति में एक विशिष्ट विषय पर किया गया ऐसा भाषिक व्यवहार है जिसमें विषयवस्तु व्यवस्थित रहती है। इसमें अनेक वाक्य होते हैं अर्थात् वह एक वाक्य से अधिक बड़ी होती है, उसका एक संप्रेषणीय प्रकार्य होता है। इसमें संसक्ति, संबद्धता और सूचनात्मकता जैसे तत्व निहित होते हैं।

अन्य पुरुष सर्वनाम (जैसे वह, वे अथवा अंग्रेज़ी के He, She, It, They) पूर्वकथित संज्ञा पदबंधों का संदर्भ निर्देश करते हैं। जैसे 'यहाँ कुछ लड़के आपस में झगड़ रहे थे। वे चले गए।' अथवा "एक कौवा था। वह बहुत प्यासा था'। अन्वादेश (Anaphora) की ये कड़ियाँ प्रोक्ति की आंतरिक संसक्ति को सुदृढ़ करती हैं।

5. महावाक्य की संकल्पना -

भाषा-चिंतन की भारतीय परंपरा में महावाक्य की संकल्पना मिलती है। संस्कृत के विद्वानों यथा ***जैमिनि, कुमारिल, पाणिनि*** आदि ने प्राचीनकाल में उपनिषदों, वेदशास्त्रों के विश्लेषण के संदर्भ में अर्थैक्य (अर्थ की एकता) और वाक्यैक्य (वाक्यों की एकता) के सिद्धांत को समाहित करने वाली महावाक्य की संकल्पना दी है। ***आचार्य विश्वनाथ*** ने वाक्यों के समूह को महावाक्य कहा है -

स्वार्थबोधो समाप्तानामंगत्वव्यपेक्षया ।
वाक्यानामेकमवाक्यत्वं पुनः संहृत्य जायते ।।

अर्थात् प्रत्येक वाक्य अपने-अपने अर्थ बता चुकने पर अन्य संबद्ध वाक्य का अंग बन जाता है और पुनः ये सब मिलकर महावाक्य ही बनते हैं। भारतीय मनीषियों द्वारा काव्य जैसे साहित्यिक पाठों को भी महावाक्य माना गया है।

अब आधुनिक भाषाविज्ञान में पाठ-भाषाविज्ञान का उद्भव और विकास हुआ है जिसमें पाठ को प्रायः अभिलेखित (Recorded) प्रोक्ति के रूप में परिभाषित किया जाता है, जो एक महावाक्य के सदृश ही है। संस्कृत की महावाक्य विश्लेषण की महान परंपरा की समझ प्रोक्ति विश्लेषण अथवा पाठ-भाषाविज्ञान के लिए आवश्यक है।

6. पाठ और पाठ-विश्लेषण --

पाठ की प्रकृति संयोजनात्मक होती है। पाठ एक निष्पत्ति होता है। इसमें सूचना प्रवाह की निरंतरता, पाठक को संदेश संप्रेषित करने का प्रयत्न, प्रतिपाद्य का विकास तथा इस हेतु प्रयुक्त युक्तियाँ, विषयवस्तु के साथ लेखक का सम्बन्ध, पाठक का पूर्वकल्पित ज्ञान - इन सबका परिणाम है पाठ। पाठ की संरचना में अंशों की भूमिका को अंशों के संयोजन से ही समझा जा सकता है। पाठ कठोर रूप में व्याकरणनिष्ठ नहीं हो पाते। वास्तविक भाषा व्यवहार का यथार्थमूलक अध्ययन पाठ-विश्लेषण का लक्ष्य होता है। पाठ अधिवाक्य या वाक्य संरचना के अधिक्रम में वाक्योपरि स्तर मात्र नहीं होता है। वह अपने आप में संप्रेषण की एक इकाई है जिसमें अधिक्रम का उतना महत्व नहीं जितना संसक्ति का। पाठ अपनी पूर्णता में प्रकट होता है।

7. भारतीय परंपरा में पाठ की अवधारणाः

कपिल कपूर (1994, 27-30) मानते हैं कि प्राचीनकाल से ही भारतवर्ष में मौखिक पाठ की बड़ी समृद्ध परंपरा रही है। इसके अंतर्गत हम दर्शनशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, सामाजिक संरचना और प्रतिमान, साहित्य सिद्धांत और तर्कशास्त्र संबंधी पाठों की गणना करते हैं। ये मोटे तौर पर दो भाषाओं संस्कृत और तमिल में तीन प्रकार के हैं– शास्त्र, संग्रह और टीका

(1) शास्त्र- मूलपाठ
(2) संग्रह- सर्वेक्षण संकलन संहिता
(3) टीका- व्याख्या

पाठ के दो पक्ष हैं- संयोजन कृति सर्जन और आगे आने वाली पीढ़ियों को संप्रेषण। इस दृष्टि से भारतीय पाठ की

परंपरा पाश्चात्य परंपरा से भिन्न है। उदाहरणार्थ भारतीय पाठों में मूल लेखक की जीवनी संबंधी उल्लेख नहीं मिलता कि वे कौन थे, कहाँ के रहने वाले थे, उन्होनें कब लिखा आदि। प्रायः यही सूचना मिलती है कि वह अमुख पाठ के पहले की है या बाद की अथवा किसी अन्य कृति में उसके बारे में उल्लेख किया हुआ मिलता है। इसका तात्पर्य यह हुआ कि पाठ का अर्थ बाह्य प्रभावों से मुक्त रहता था। भावी पीढ़ी में उनके संप्रेषण की प्रक्रिया बड़ी जटिल हुआ करती थी। इन मौखिक पाठों की अभिव्यक्ति में छंद, सुर, तान की विशेष भूमिका होती थी। बिना किसी बदलाव के मूलपाठ यथावत् संप्रेषित होता रहा। इसके बावजूद समय बीतने के साथ और अर्थ ठीक से न समझ पाने के कारण याद किए हुए पाठ में अवान्तर भेद बढ़ते गए। पाठ संप्रेषण के उद्देश्य से अधिकारी शिष्य प्रशिक्षित किए गए, पाठों को विखंडित कर के नवीन क्रम विन्यास के तहत उनके पदपाठ तैयार किए गए। परवर्तीकाल में उन पाठ भेदों की तुलना करके पाठ संपादन अथवा पाठालोचन करने की परंपरा विकसित हुई।

मौखिक परंपरा के साथ-साथ पाठों की लिखित परंपरा भी मिलती है। ईसापूर्व तीसरी-चौथी शताब्दी के अशोक के अभिलेखों का भी अपना महत्व है। अर्थशास्त्र में कौटिल्य ने अंतिम पंद्रहवें अध्याय में अपनी कृति के संरचना विधान का विवरण दिया है। इनके तकनीकी शब्द कृति के अर्थ निर्धारण में पूर्णता के प्रतिमान सिद्ध हुए। कौटिल्य के अधिभाषा परक कथन भारतीय पाठ-प्रोक्ति विश्लेषण संबंधी चिंतन की गहराई और विस्तार के उत्कृष्ट प्रमाण हैं।

सूर्यकान्त त्रिपाठी(2011,66) लिखते हैं कि रीति सिद्धांत में पाठ विश्लेषण की पद्धति टीका नाम से प्रसिद्ध है। जिसकी तुलना पाठ विश्लेषण की फ्राँसीसी पद्धति "ऐक्सप्लिकासियो द तेक्स्त" से की जा सकती है। एक सुनिश्चित पाठ प्रायः एक छंद की टीका की परंपरा के रूप में संस्कृत साहित्य में अत्यंत गहराई से प्रतिष्ठित है।

पाठ और प्रोक्ति अलग दिखने के बावजूद एक दूसरे का इतना अतिक्रमण करते हैं कि एक समय के बाद अनायास ही इनके एक होने का भ्रम हो जाता है। कई बार तो यह एक दूसरे के पर्याय जैसे लगते हैं। इसको प्राकृतिक भाषा संसाधन ने पाठ-संसाधन एवं आलोचना के क्षेत्र में पाठ-विश्लेषण के प्रभाव ने और अधिक उलझा दिया है। पाठ-संसाधन में पाठ को भाषा के लिखित रूप में ही ग्रहण किया जाता है, जबकि साहित्यिक आलोचना की विधा में पाठ का अर्थ कृतिपरकता होता है।

काव्यशास्त्रीय गुणों से संपन्न होने के कारण नाटक, कविता आदि विशेष रूप से स्पृहणीय है । रस, छंद, अलंकार, रीति, ध्वनि, वक्रोक्ति, औचित्य, चमत्कार आदि गुण काव्य को उत्तम बना देते हैं । और उसमें संस्कृति की अभिव्यक्ति का पक्ष प्रबल होता है । महाकवि बिहारी का दोहा है :

बतरस लालच लाल की मुरली धरी लुकाय
सौंह करै, भौंहनि हँसै, देन कहै, नटि जाय ।

श्रीकृष्ण पुराण पुरुष हैं । उनके कई नाम हैं नंदलाल, मुरलीधर आदि । किशोर कृष्ण से बात-चीत करने में गोपियों को आनंद आता था । कोई गोपी उनकी मुरली छुपा देती है जिसे खोजने के लिए वे आते हैं । गोपी सौगंध के साथ कहती है कि मैंने नहीं ली है, मुझे नहीं मालूम । फिर वह आँखों में हँसती हैं अर्थात उसी ने ली है । कहती है कि दे दूंगी, क्यों परेशान होते हो । अंत मे कहती हैं कि नहीं दूंगी, क्या कर लोगे ? इस दोहे की दूसरी पंक्ति में चार क्रिया पदबंध हैं जो चार वाक्यों के बराबर हैं । किस ने मुरली छिपा ली है ? कौन उत्तर दे रहा है? इसका उल्लेख दोहे में नहीं हुआ है लेकिन फिर भी समझ में आ जाता है । पहला शब्द 'बतरस' बहुत महत्वपूर्ण है । वह पूरे दोहे का बीजशब्द है।

साहित्य का अध्ययन पाठ के गहन विश्लेषण के आधार पर किया जाना चाहिए। संरचना और शब्दावली को विश्लेषित करने के लिए उसकी चीरफाड़ करनी होती है। किसी साहित्यिक पाठ की व्याख्या के तीन प्रयोजन होते हैं– कलावस्तु के रूप में कृति का मूल्यांकन, उसके संदेश को निकालना तथा लेखक का जीवन दर्शन लाकर प्रस्तुत करना। साहित्यिक पाठ अपना परिवेश और संदर्भ स्वतः निर्मित और निर्धारित करता है, पाठगत भी और पाठबाह्य भी। संदर्भ से काटकर पाठ की व्याख्या नहीं की जा सकती है।

कुछ लोग साहित्य को वाणिज्यिक व्यवसाय मानते हैं जिसके एक छोर पर उत्पादक है और दूसरे छोर पर उपभोक्ता। अर्थात् सर्जक लेखक और पाठक दोनों के बीच उत्पाद वस्तु है - साहित्यिक पाठ। पाठ और पाठक के बीच संप्रेषण की समस्या आती है। असल में कोई साहित्यिक पाठ वस्तु मात्र नहीं है जिसे खरीदा, उपभोग कर लिया और वस्तु का वज़ूद खत्म। पाठ को बार-बार पढ़ा जा सकता है और हर बार के पढ़ने में पाठक में नई अनुभूति का संचार होता है। जो सचमुच साहित्य है वह कालजयी हो सकता है। युगों तक वह पाठकों को प्रभावित करता है। लोग बार-बार उसका पाठ करते हैं, उसका अभिनय करते हैं, उसका लेखन अथवा उसके किसी अंश का पुनर्लेखन करते हैं, और उसके आदर्शों को जीते हैं। इस दृष्टि से साहित्य शाश्वत और नितनूतन होता रहता है। साहित्यिक पाठ बार-बार पढ़ा जाता है फिर भी उसका सत्व कभी चुकता नहीं। उसकी अंतिम व्याख्या भी नहीं हो सकती क्योंकि उसमें नवीन अर्थ उद्घाटन की गुंजाइश बराबर बनी रहती है। वह कलात्मक कृति है जिसमें विविध प्रकार के सौंदर्य तत्व निहित रहते हैं जिनकी अनुभूति प्रत्येक पाठक अपने ढंग से करता है। पाठक के पठन में पाठ का पुर्ननिर्माण होता रहता है।

कोई कविता औच्चारणिक रूप में या लिखित रूप में हो सकती है लेकिन भिन्न-भिन्न लोगों के सस्वर पाठ में अंतर हो सकता है। अथवा भिन्न-भिन्न लोगों द्वारा हस्तलिखित, टंकित या मुद्रित रूप में अंतर हो सकता है, फिर भी कविता वही रहती है। अर्थात् कविता भौतिक पक्ष अथवा पदार्थ का अतिक्रमण करती है। कृति का संज्ञान पाठक में होता है, वह भी पाठ है। उसमें कलात्मक सौंदर्य की विविधता हो सकती है। जबकि मूल कृति अपरिवर्तित रहती है।

भाषा शिक्षण, अनुवाद आदि अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान की सर्वाधिक महत्वपूर्ण विधाएं हैं । भाषाशिक्षण के पाठ होते हैं जो अनुस्तरित क्रम मे व्यवस्थित किए हुए होते हैं । शुरू में आसान पाठ, बाद वाले पाठ कठिन से कठिनतर। अंतिम पाठ कठिनतम होता है। पठ् धातु से पढ़ना क्रिया बनती है । लिखित अथवा मुद्रित भाषा रूप को पढ़ लेने और आवश्यकतानुसार लिख लेने की योग्यता स्कूल कॉलेजों मे औपचारिक शिक्षण से आती है ।

अनुवाद के क्षेत्र में मूल पाठ और अनूदित पाठ की अवधारणा बहुत महत्वपूर्ण है । चूँकि अनुवाद का कोई सर्वमान्य स्वरुप नहीं है इसलिए अनूदित पाठ का भी कोई सर्वमान्य स्वरुप नहीं है । अर्थात अनूदित पाठ कई प्रकार के और मूल से बहुत भिन्न भी हो सकते हैं ।

जैसे : 'Smoking is prohibited' के हिंदी मे दो अनुवाद देखिए :

(i) धूम्रपान निषिद्ध है ।

(ii) बीड़ी, सिगरेट पीना मना है ।

पहला अनुवाद शिक्षित प्रबुद्ध वर्ग के लोगों के लिए है, दूसरा साधारण लोगों के लिए ।

पाठ शब्द से 'पदपाठ', 'जटापाठ','घनपाठ', 'पाठभेद', 'पाठालोचन' जैसे तकनीकी शब्द भी व्युत्पन्न होते हैं जो अन्य

प्रयुक्तियों में बहुत प्रासंगिक हैं।

पाश्चात्य विद्वान होवार्ड जैक्सन(2008,78) ने आंतरिक विशेषताओं, संरचनाओं और विशिष्ट प्रकार्य के आधार पर पाठ प्रकारों (कथात्मक, वर्णनात्मक, व्याख्यात्मक, तार्किक, अनुदेशात्मक, शिक्षाप्रद आदि) की पहचान की है।

ब्यूग्रांड और ड्रेसलर ने 'पाठात्मकता के सात' प्रतिमान बतलाए है और यह भी कहा है कि उनमें से एक भी प्रतिमान कम होगा तो पाठ संप्रेषणीय नहीं होगा। उनके सात प्रतिमान इस प्रकार है :

1. संसक्ति
2. संगति
3. उद्देश्यात्मकता
4. स्वीकार्यता
5. सूचनात्मकता
6. स्थित्यामकता
7. अंतरपाठीयता

उपर्युक्त प्रतिमानों का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है :

1. संसक्ति का संबंध पाठ के विभिन्न अंशों के व्याकरणिक और/या कोशीय युक्तियों द्वारा जुड़े होने से है जैसे राजेश बाजार में कपड़े खरीद रहा था। अगले महीने उसके भाई की शादी है।
2. संगति पाठ के विभिन्न वाक्यों के आर्थी/तार्किक रूप से संबद्ध होने से है। जैसे, रास्ता बहुत लंबा था, अच्छी सड़क ने मानों दूरियाँ कम कर दीं।
3. उद्देश्यात्मकता से अभिप्राय इस मान्यता से है कि लेखक/वक्ता एक संसक्त और संगत पाठ लिख/बोल रहा है।
4. स्वीकार्यता का संबंध इस मान्यता के साथ है कि पाठक/श्रोता एक ससक्त और संगत पाठ पढ़/सुन रहा है।
5. सूचनात्मकता के प्रतिमान के अनुसार सूचनात्मकता होने पर ही पाठ पठनीय या सार्थक होता है। सूचनाओं के अज्ञात या अनपेक्षित होने के अनुपात में पाठ की सूचनात्मकता बढ़ती है। पूर्णत: ज्ञात या अपेक्षित सूचना का मूल्य नगण्य होता है।
6. स्थित्यात्मकता - का संबंध पाठ को उसके घटित होने की स्थिति में प्रासंगिक बनाने से है। इससे स्थिति विशेष में पाठ की उपयुक्तता का मूल्यांकन होता है।
7. अंतरपाठीयता प्रतिमान से तात्पर्य पाठ के अपने पूर्ववर्ती पाठों तथा समकालीन पाठों के साथ प्रत्यक्ष उद्धरणों तथा अभिव्यक्तिमूलक एवं कथ्यमूलक प्रभावों से युक्त होने से है जिनके ज्ञान के बिना पाठ का समुचित निर्वचन संभव नहीं होता। (द्रष्टव्य उमाशंकर उपाध्याय 1997, 133-38)

8. निष्कर्ष -

वर्तमान समय में प्रोक्तिविश्लेषण और पाठभाषाविज्ञान अपने समन्वित रूप में एक अंतरानुशासनिक अध्ययन क्षेत्र बन चुका है। अब यह साहित्यिक आलोचना के क्षेत्र से बहुत गहरे रूप से जुड़ गया है। जिसके प्रभावस्वरूप 'पाठ' की संकल्पना न सिर्फ सीमित हुई है बल्कि प्रोक्ति-विश्लेषण की संकल्पना में समाहित हो चुकी है। प्रोक्ति और पाठ के भेद और आयाम को समझ पाने से भाषिक संप्रेषण को समझना सहज होगा और आवश्यकतानुसार उसके उचित प्रयोग से संप्रेषण प्रभावशाली होगा।